सद्भाव की विरासत

उमाकान्त मालवीय

पुस्तिका सीरीज़-87

प्रकाशक :
isd **इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**
फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए,
लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067
टेलीफोन : 091-26177904, टेलीफैक्स : 091-26177904
ई-मेल : notowar.isd@gmail.com
वेबसाइट : www.isd.net.in

प्रकाशन वर्ष : 2019

चित्रांकन : **जुही शुक्ला**

उनका जो फ़र्ज़ है, वो अहले सियासत जाने
मेरा पैग़ाम मोहब्बत है, जहाँ तक पहुँचे।

—जिगर मुरादाबादी

सद्भाव की विरासत

कवि-निबन्धकार उमाकान्त मालवीय की यह पुस्तिका सम्भवत: 1980 में पहली बार प्रकाशित हुई थी। इसमें ऐसी ऐतिहासिक कहानियाँ हैं जिनके कुछ प्रसंग हम जानते हैं, कुछ नहीं जानते। कहा जा सकता है ये कहानियाँ नहीं बल्कि कुछ प्रसंग हैं—इन प्रसंगों में जो एक चीज़ समान है वह है पाठक को अपनी उस रचना से परिचित कराना जिसे सदियों के दौरान हमने बड़े प्यार से रुच-रुच के गढ़ा था—मिलजुल कर रहने का तरीका और संवाद का कौशल। क्योंकि भारत तो तभी बनता है जब संस्कृतियाँ बात करती हैं।

मध्यकाल से लेकर आधुनिक काल के बीच बिखरे ये प्रसंग ऐतिहासिक पात्रों को नाटकीय किरदारों की तरह जीवन्त और बोलने वाला बना देते हैं। प्रत्येक प्रसंग ऐतिहासिकता की शास्त्रीय कसौटी पर सौ प्रतिशत खरा उतरे न उतरे वह हमारे उस भारत की सांस्कृतिक सच्चाई है जिसे हमने कई सदियों में बनाने का सपना देखा है—इस सपने की छाया हमने आज़ादी की लड़ाई में भी देखी है और अपने संविधान में भी। एक बहुसांस्कृतिक-बहुलतावादी भारत जहाँ संस्कृतियों और धर्मों के बीच लोकतंत्र हो।

आज हमारा वही 'संस्कृति का लोकतंत्र' ख़तरे में है। धर्मों और संस्कृतियों के बीच संवाद की जगहें सिकुड़ गई हैं और सम्मान की जगह आक्रामकता ने ले ली है। ऐसे में संवाद, सम्मान और सहिष्णुता से भरे ये प्रसंग हमें उस दुनिया में ले जाते हैं जहाँ असली भारत बसता है—प्रेम और सद्भाव का भारत।

●

हुमायूँ की राखीबंद बहन

गुजरात के बादशाह बहादुरशाह के भाई चाँद खाँ ने मेवाड़ में शरण ली। बादशाह ने अपने बागी भाई को दण्डित करने के लिए राणा से उसे वापस माँगा और बात न मानने पर युद्ध की धमकी दी। राणा ने उत्तर दिया—''दूत शाह बहादुर से जाकर कह दो, हम राजा शिवि के वंशधर हैं। हमारे पास शरणागत वत्सलता की अद्भुत विरासत है। हमने कबूतर की रक्षा के लिए अपना माँस तौल दिया था, परन्तु उसे बाज़ को नहीं सौंपा था। शरणागत कबूतर तक की रक्षा के लिए हमने प्राण होम दिया था। चाँद खाँ तो हमारे बन्धु हैं। हम उन्हें आपको कदापि नहीं सौंप सकते।''

राणा का संदेश सुनकर बहादुरशाह का क्रोध उबल पड़ा और उसने मेवाड़ पर आक्रमण का आदेश दिया। तब तक बहादुरशाह के पूज्य धर्मगुरु शेख औलिया पधारे, उन्होंने बहादुरशाह को बहुतेरा समझाया। राणा एक नेकदिल सच्चा इन्सान है। उसने चाँद खाँ को पनाह दी है और उसकी ख़ातिर सब कुछ होमने को तैयार हैं। मज़हब तो रास्ता होता है, मंज़िल तक पहुँचने का, उसे दीवार मत बनाओ शाह।'' लेकिन बहादुरशाह नहीं माना और कूच का डंका बजवा दिया।

देखते-देखते बहादुरशाह की विशाल सेना ने मेवाड़ को घेर लिया। मेवाड़ की सेना का नेतृत्व, राणा साँगा की रानी जवाहर बाई ने किया और रणक्षेत्र में वीरगति पायी। राजपूत संख्या में एकदम कम थे, फिर भी उन्होंने डटकर लोहा लिया। राणा की दूसरी रानी कर्मवती ने एक विशेष दूत के हाथ बादशाह हुमायूँ को राखी भेजी।

इधर हुमायूँ परेशान था, उसके भाई उसे बराबर तंग करते थे, फिर भी पिता बाबर की इच्छानुसार उन्हें बराबर माफ करता रहा। भाइयों के कारण उसने हजार-हजार संकट भी झेले थे, फिर भी वह उन्हें क्षमा ही करता रहा। उसने अपने सामने कौरव-पाण्डवों के भाई-भाई के संघर्ष को नहीं वरन् राम-लक्ष्मण, राम-भरत के बन्धु प्रेम के आदर्श को रखा था। इस कारण वह उनके बड़े-से-बड़े अपराधों को भी माफ करता रहा। एक ओर भाइयों की दगाबाजी दूसरी ओर बागी शेर खाँ, एक जबरदस्त सरदर्द और फिर ऐसे में रानी कर्मवती की राखी लेकर मेवाड़ का दूत पहुँच गया।

हुमायूँ के सिपहसालार ने कहा, ''हुज़ूर गुस्ताखी माफ करें तो कुछ अर्ज करूँ।'' ''कह सकते हो।'' परेशान हुमायूँ ने कहा। ''जहाँपनाह एक ओर भाइयों की हुकुम अदूली, दूसरी ओर बागी शेर खाँ। तख़्त खतरे में हैं, ऐसे में एक हिन्दू औरत की यह सूत की राखी। यह औरत राणा साँगा की बेगम है, जो आपके अब्बा हुज़ूर का जानी दुश्मन था। दुश्मन की औरत की, हमबिरादर बहादुरशाह के ख़िलाफ़ मदद करना, कहाँ तक मुनासिब होगा?''

''तुम अपनी बात कह चुके हो, अब मेरी सुनो, हिन्दू-मुसलमान से ऊपर होता है, भाई-बहन का प्यार। उसने मुझे यह राखी भेजकर अपने भाई का रुतबा अता किया है। मैं शुक्रगुज़ार हूँ। अब वह दुश्मन नहीं, मेरी अपनी बहन है। मेवाड़ ने एक मुसलमान चाँद खाँ को पनाह देकर यह मुसीबत मोल ली है। शरणागत सिर्फ शरणागत है, वह हिन्दू और मुसलमान नहीं होता, मेवाड़ ने अपने चलन से यह साबित कर दिया। मेवाड़ तुझे यह हुमायूँ सलाम करता है। मैं यह हरगिज़ नहीं बर्दाश्त कर सकता कि लोगबाग कहें कि तैमूर के ख़ून ने एक मुसीबतज़दा बहन की राखी की इज़्ज़त नहीं की, अपने फ़र्ज़ से मुँह चुराया। बहन की मुहब्बत पर मैं जन्नत की सल्तनत ठुकरा दूंगा, यह तो महज छोटी-सी सल्तनत है। बहन मुसीबत में है, उसने भाई को पुकारा है और हम हिन्दू-मुसलमान में उलझें? लानत है। कूच का हुकुम दो, बहादुरशाह को उसकी गुस्ताख़ी की सज़ा मिलेगी। बहादुरशाह को ख़त भेज कर हुकुम दो वह मेवाड़ से घेरा उठा ले नहीं तो मुझसे बुरा और कोई न होगा।'' हुमायूँ ने कड़क कर हुकुम दिया।

बहादुरशाह पत्र पाकर चकरा गया, उसने हुमायूँ को कहलाया-''एक काफ़िर की ख़ातिर आप मुसलमान से टकरा रहे हैं। आइये, हम दोनों मिलकर काफ़िर को उसकी बेअदबी की सज़ा दें। उसके बाद हम दोनों मिलकर बागी शेर खाँ को नेस्तोनाबूद कर देंगे।'' हुमायूँ ने बहादुरशाह का पत्र फाड़कर पाँव तले रौंद

डाला। गंगा तट से कूच का डंका बज गया। कर्मवती का राखीबंद भाई चम्बल तट तक पहुँचा। उसे चैन नहीं था। वह रात-दिन बढ़ता चला आ रहा था। एक-एक पल भारी लग रहा था। बादशाह हुमायूँ को रास्ते में शेख औलिया मिले, उन्होंने हुमायूँ की सराहना की। उन्होंने हुमायूँ को आशीष भी दिया।

रानी कर्मवती ने जब देखा कि अब विजय की कोई आशा नहीं रही, तो राजपूतानियों ने जौहरव्रत करने का निश्चय किया। राजपूतों ने साका किया। राजपूतानियों ने अपना श्रृंगार किया और धधकती हुई चिता पर चढ़ गयीं। राणा साँगा के भाई बाघ सिंह ने रक्त तिलक करवाया। अपने सर पर मेवाड़ के राणा की छंगी रखवाई और राजबलि देने के उद्देश्य से रण में जूझ गये। बहादुरशाह को चाँद खाँ नहीं मिला, उसके हाथ केवल राजपूतानियों की राख ही लगी। राजपूतों ने केसरिया बाना धारण किया और एक-एक सैनिक बलि हो गया। बादशाह हुमायूँ पहुँचा तो सब कुछ खाक हो चुका था। उसने पवित्र राख को हाथ में लेकर इंतकाम की कसम खायी और बहादुरशाह को खासा अच्छा सबक सिखाया।

बाबर की बेटी गुलबदन बेगम ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ हुमायूँनामा में एक घटना का जिक्र किया है। केरल के महाकवि वल्लतोल ने उसे अपनी लेखनी का अमृत स्पर्श देकर अमर कर दिया है। घटना कुछ इस प्रकार है। एक दिन बादशाह हुमायूँ सैर के लिए निकले तो राह में एक मासूम सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो गये। यह देखकर एक चापलूस सिपहसालार ने बादशाह सलामत को खुश करने के लिए उस लड़की को उठवा लिया और उसे बादशाह के हरम में पहुँचवा दिया।

हरम में बादशाह ने जब उस लड़की को देखा तो वह रो रही थी। उन्हें सदमा लगा। वे बोले—"आपकी माँग में तो सिंदूर है, आप तो किसी की पाक अमानत हैं। आप अपनी मरजी से मुझे कबूल करतीं तो इसे मैं अपनी ख़ुशकिस्मती समझता।" इस पर वह जोर से रोने लगी—"मैं अपने भैया को राखी बाँधने जा रही थी और यहाँ पहुँचा दी गयी।" "पगली, इसमें रोने की क्या बात है? तू भैया के यहाँ जाने के लिए निकली थी और तू भैया के ही यहाँ पहुँची है। चल पहले मुझे राखी बाँध।" बहन की आँखों में आँसू थमे और ओठों पर मुस्कान तैर गयी। बादशाह सलामत ने लड़की से राखी बँधवायी और हुक्म दिया—"कहाँ है वह सिपहसालार, उसका सर कलम कर दिया जाय।"

सिपहसालार सामने हाज़िर हुआ तो थर-थर काँप रहा था। हुमायूँ की राखीबंद बहन ने कहा—"इस मुबारक़ मौके पर जब मुझे आप जैसा भैया मिला हो, यह ख़ून-खराबा क्यों? आप इज़ाज़त दें आलीजाह तो मैं इन्हें भी अपना

राखीबंद भाई बना लूँ।'' और बहन ने सिपहसालार को भी राखी बाँध दी।

''अपनी कमीनगी देख और इस बहन का बड़प्पन देख, कोई ग़ैरतमंद मर्द उस औरत को जो किसी और के यहाँ रही हो, कबूल नहीं करेगा हमें इसका भी बंदोबस्त करना होगा।'' हुमायूँ ने कहा। सिपहसालार के साथ स्वयं बादशाह हुमायूँ उस बहन के भाई के यहाँ गया, उसे राखी बँधवायी और फिर उसके पति के यहाँ जाकर कहा—''किबला, यह मेरी बहन, जिस समय घर से बाहर निकली थी, उस समय जितनी पाक साफ थी, अभी भी उतनी ही पाक साफ है। यह मैं ख़ुदाबन्द, पाक रसूल और क़ुरान शरीफ़ की कसम खाकर कहता हूँ। मेरी बहन को कबूल करने की मेहरबानी कर हमारे गुनाहों के लिए हमें माफ करें।'' इतना कहकर बादशाह हुमायूँ ने अपनी बहन, उसके पति को सौंप दी।

प्रताप की माँ

स्वामिभक्त भामाशाह से आर्थिक सहायता मिलने पर राणा प्रताप की विजय यात्रा का दौर शुरू हुआ। वे एक के बाद दूसरे किले जीतने लगे। इसी दौर में गोगूंदा की लड़ाई भी हुई। इस लड़ाई में मुगल सेना का नेतृत्व सुयोग्य सेनापति बैरम खाँ के योग्यतर सेनापति पुत्र सुप्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानखाना कर रहे थे। महाराणा प्रताप के पुत्र अमर सिंह के हाथों में राजपूती सेना की कमान थी। अस्वस्थता के कारण महाराणा प्रताप इस युद्ध में भाग नहीं ले पाये थे।

लड़ाई में मुगल फ़ौज को हारकर पीछे हटना पड़ा। खानखाना के हरम पर, जो कि उस समय के रिवाज के अनुसार युद्ध-भूमि में ही था, राजपूती सेना ने घेरा डाल दिया। इसकी सूचना मिली तो राणा प्रताप की पहली प्रतिक्रिया हुई— ''अमर सिंह तुम मर क्यों नहीं गये, तुम्हें हमारी मर्यादा भी याद नहीं रही। स्त्री और बच्चों पर हाथ डालना शौर्य की मर्यादा के विपरीत है।'' तेज बुखार में भी प्रताप युद्ध-भूमि में गये।

''खानखाना की सबसे बड़ी बेगम कौन हैं ?'' राणा ने पूछा। मालूम होने पर वे उनके करीब गये। ''जो सर शहंशाह अकबर के सामने नहीं झुका, उसे मैं आपके कदमों पर झुकाता हूँ। आपका स्वागत-सत्कार हम शान-शौकत से नहीं कर पा रहे हैं, इसका हमें अफसोस है। हम अपनी करनी पर शर्मिन्दा हैं, हमें माफी देने की मेहरबानी करें। आप यह मानें कि आप अपने बेटे के यहाँ हैं। गरीब बेटे के यहाँ जो कुछ रूखा-सूखा है, उसे कबूल करें। हम आपके शुक्रगुज़ार होंगे।''

स्वागत-सत्कार के बाद पाँच सौ राजपूत सैनिकों की सुरक्षा में बेगमात की पालकियाँ अपने घर की ओर विदा हुईं। उधर बेगमात को लड़ाई में छोड़ आने

के कारण शहंशाह अकबर रहीम खानखाना पर नाराज हुए तो खानखाना ने बाअदब अर्ज़ किया—"गुस्ताखी माफ हो जहाँपनाह, बेगमात वहाँ महफ़ूज़ हैं, मैं राणा को जानता हूँ।" बेगमात राणा प्रताप के यहाँ से लौटकर आयीं तो बड़ी बेगम को दरबार में तलब किया गया। वहाँ के सारे हाल-चाल बतलाने के बाद बेगम ने कहा—"आलमपनाह बेअदबी मुआफ़ की जाय। प्रताप की रूह को

फ़तह नहीं किया जा सकता, भले ही उसके जिस्म को फ़तह कर लिया जाय। यह बात मैं प्रताप की गर्वीली माँ की हैसियत से कह रही हूँ। मुझे प्रताप ने माँ कहा है।'' बेगम की बात सुनकर प्रताप की सराहना करते हुए अकबर ने कहा—''मुझे इस बात का फ़क्र है कि मुझे प्रताप जैसा ऊँचे पाये का दुश्मन मिला है।''

रमजान का महीना समाप्ति पर था। महाराणा प्रताप अपने विश्वासपात्र सैनिकों के साथ अरावली के बीहड़ जंगल में दर-दर भटक रहे थे। उनका पीछा हर जगह मुगल सैनिक कर रहे थे। उनकी सेना में कुछ स्वाभिमानी मातृभूमि भक्त मुसलमान थे। सैनिकों को कई-कई महीनों से वेतन भी नहीं मिला था। राणा की आर्थिक स्थिति काफी शोचनीय थी। राणा प्रताप ने अपने मुसलमान सैनिकों को रोज़ा रखते तो देखा, परन्तु उन्हे रोज़ा खोलते नहीं देखा, वे बहुत दुःखी थे।

राणा प्रताप ने अपना कष्ट महारानी अजवांदे से कहा, उनके हाथ में, एकमात्र कड़ा बचा था। जिस पर मेवाड़ का राज-चिह्न अंकित था। महारानी ने अपने एक हाथ का बचा एकमात्र कड़ा निकालकर राणा को दिया। ''सैनिकों के लिए ईद की व्यवस्था की जाय।'' इस आदेश के साथ राणा ने वह कड़ा अपने एक राजपूत सैनिक को दे दिया। साथ ही यह भी हिदायत दी कि मुसलमान सैनिकों को यह खबर न लगे कि यह व्यवस्था किस प्रकार हुई। ईद की सेवइयाँ तैयार हुईं। राणा ने उन्हें आकर ईद की मुबारकबाद पेश की। उस समय राणा प्रताप, महारानी और उन मुसलमान सैनिकों की आँखें एक सात्विक सद्भाव से डबडबा आयीं थीं।

शिवाजी और तुलजा भवानी

एकांत शिविर में शिवाजी चिन्तामग्न बैठे थे, वे अपनी किसी योजना की उधेड़-बुन में लगे थे। इतने में सेनापति माधव भमलेकर ने शिविर में प्रवेश किया। उनके हाथ में एक ग्रंथ और ओठों पर कुटिल मुसकान थी। शिवाजी के पूछने पर सेनापति ने बतलाया—''आज हमने मुगल सेना को ज़बरदस्त शिकस्त दी है।'' ''यह तुम्हारे हाथ में क्या है?'' शिवाजी ने जिज्ञासा की। ''महाराज यह उन यवनों का धर्मग्रंथ क़ुरान-शरीफ है, जो हमारे देवालयों को भ्रष्ट करते हैं, जो हमारे धर्मग्रंथों को नष्ट करते हैं। इसे देखते ही मेरे हाथ प्रतिशोध की भावना से मचल उठे हैं।''

शिवाजी ने घुटने टेक कर उस पवित्र ग्रंथ क़ुरान-शरीफ को लिया, चूमा, सर माथे लगाया और फिर उसे बाइज़्ज़त इमाम को सौंप दिया। ''भमलेकर, वीर बर्बर असभ्य नहीं होता है। प्रत्येक धर्म के धर्मग्रंथों के प्रति मेरे मन में समान रूप से असीम आदर है। तुम मेरे सेनानी हो, तुमने ही मुझे नहीं जाना अन्य धर्म का तिरस्कार करने वाला स्वयं अपने धर्म से भ्रष्ट होता है। तुमने अपराध किया है और गम्भीर दण्ड के भागी हो।''

उन्होंने देखा कि पालकी में कोई सुन्दरी बैठी थी। वह भय से थर-थर काँप रही थी। ''भमलेकर! आप कौन हैं?'' शिवाजी ने पूछा। महाराज, यह मुगल सेनापति की बेगम हैं। सेनापति बहलोल खान की यह बेगम अपने सौन्दर्य के कारण मुगल जगत में चर्चित हैं। यह दासी के रूप में आपको भेंट है।'' भमलेकर ने सगर्व कहा। ''आप यहाँ निश्चिन्त रहें, बेटे के घर में माँ के लिए भय का क्या कारण हो सकता है? आप सचमुच बहुत सुन्दर हैं। आपने यदि मुझे जन्म

दिया होता तो मैं भी सुन्दर होता। माँ, बेटे को माफ कर देना, इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है कि मेरा ही सेनापति मुझको समझ नहीं पाया। माता जीजाबाई के दिये संस्कार इतने कच्चे नहीं हैं, मेरे लिए हर परदारा मातृवत् है दादा गुरु कोंडदेव और गुरु समर्थ की शिक्षा क्या इतनी कच्ची है? बेगम का समुचित आदर-सत्कार कर इन्हें सादर इनके पति तक पहुँचा दिया जाय। माँ, मुझे सेनापति बहलोल खान से मेरे अपराध के लिए क्षमा दिलवा देना।'' शिवाजी बराबर बोले जा रहे थे।

''वीर शिवा, मुझे ऐसा बेटा पाकर फ़क्र है, तू कभी भी शिकस्त का मुँह नहीं देखेगा। अल्लाहताला तुझको बराबर फ़तह पर फ़तह देता जायेगा यह मेरी दुआ है।'' बहलोल की बेगम ने कहा। बेगम की पालकी चल दी, शिवाजी हाथ जोड़े खड़े रहे और बेगम आशीष में हाथ उठाये रही, तब तक जब तक वे परस्पर आँखों से ओझल नहीं हो गये।

बहलोल खान ने जब अपनी बेगम से सारा वृत्तान्त सुना तो वह ठगा रह गया। ''उफ मुझे बतलाया गया था कि शिवाजी शैतान है। मगर वह तो फरिश्ता है। अब उसके कदमों से मेरे सजदों का रिश्ता होगा।'' और भागता हुआ बहलोल खान लौट पड़ा। शिवाजी को दूर से देखते ही दौड़कर उसने उनका कदम चूमना चाहा। शिवाजी ने दौड़कर उसे बाहों में ले लिया।

''फरिश्ते, मेरे सर हजारों बेगुनाहों के ख़ून का गुनाह है। तेरे कदमों पर ख़ुदकुशी ही मेरा प्रायश्चित है।'' बहलोल खान ने कहा और अपने कलेजे में कटार उतार देने को प्रस्तुत हुआ। छूरे को छीनकर दूर फेंकते हुए शिवाजी ने बहलोल को गले से लगा लिया। ''बहलोल भाई, हमारी लड़ाई नाइन्साफी के ख़िलाफ़ है। इसे मैं धर्मयुद्ध कहता हूँ। आप जैसे सेनापति इस धर्मयुद्ध में हमारे साथ हों तो हमारा काम आसान होगा।''

बहलोल खान ने शिवाजी की फ़ौज का सफल नेतृत्व छः लड़ाइयों में किया और सातवीं लड़ाई में उसने वीरगति पायी।

बीजापुर के प्रधानमंत्री खान मुहम्मद की हत्या के उपरान्त कल्याण नगर में लूटपाट मच गयी। मराठा सेनापति आबाजी सोनदेव ने, मुल्ला अहमद की सुन्दर पुत्रवधु गौहरबानू को भी कैद कर लिया। गौहरबानू अपने सौन्दर्य के लिए दक्षिण भारत में बहुचर्चित थी।

गौहरबानू की कंचुकी में एक विषबुझी छूरी थी। आबाजी सोनदेव की नटखट बहन ने युक्तिपूर्वक उस छूरी को गौहरबानू से माँग लिया। इसके उपरान्त गौहरबानू शिवाजी के शिविर में पहुँचा दी गयी। शिवाजी ने गौहर को देखा तो वह काँप रही थी। ''मुझे यह जानकर अफसोस हुआ कि आपने आत्मघात की सोची, मगर यह जानकर खुशी हुई कि आप अपने संकल्प में दृढ़ हैं। यह मेरी कटार आपके लिये है, इसे अपने पास रख लीजिये, जिस क्षण मेरी नीयत बदलती नजर आये इसे मेरे कलेजे में उतार दीजियेगा। मैं तुलजा भवानी का आराधक हूँ। मुझे निहत्थी भवानी अच्छी नहीं लगती। यह कटार हाथ में सँभालकर आप शिवाजी की वंद्य-भवानी बन जायें। मैं अपनी भवानी के चरणों

पर शीश नवा दूं और आप मेरी कल्याणी बन जायें।''

''भवानी को भी ऐसे भक्त के दर्शन की लालसा है।'' गौहर ने रुख से नकाब हटा लिया। ''माता जीजाबाई के निधन के बाद से उनका स्थान खाली पड़ा है, आप वहीं बैठ जायें। मेरी माँ यदि इतनी सुन्दर होती तो मैं भी खूबसूरत होता।'' शिवाजी मुग्ध थे। दूसरे ही क्षण उनकी आँखों से आग बरसने लगी। ''मैं आबाजी सोनदेव को प्राणदण्ड देता हूँ।''

''श्रीमन्त ठहरें, आबाजी ने अपराध नहीं, उपकार किया है। उनकी मेहरबानी से ही मुझे आप सा बेटा नसीब हुआ है। मेरी इल्तजा है, आबाजी सोनदेव को माफी दी जाये।'' गौहरबानू ने अनुरोध किया। ''आप मुझे श्रीमन्त न कहें, जीजाबाई मुझे सिर्फ शिवा कहती थीं। शिवा आपके आदेश का सम्मान करते हुए आबाजी सोनदेव को क्षमा करता है।'' शिवाजी ने माँ का सम्मान किया।

विदा होने के पूर्व गौहर ने शिवाजी के मस्तक पर आशीर्वाद का तिलक लगाया और उनकी जय-जयकार की। वीर शिवा की जयकार से दिग-दिगन्त गूंज उठा।

गुरुगोविन्द सिंह की नसीहत

सिखों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी थे। उन्हें दशम पात शाह कहा जाता था। बढ़ते हुए अन्याय और अत्याचार का मुकाबला करने के लिए उन्होंने जाति का सैन्यीकरण कर दिया। वे अत्यन्त आत्मविश्वास से घोषित करते थे

चिड़ियों से मैं बाज तुड़ाऊँ,
तब गुरु गोविन्द नाम कहाऊँ।
एक से सवा लाख को लड़ाऊँ,
तब गुरु गोविन्द नाम कहाऊँ।

उनके दो नौनिहालों को दीवारों में चुन दिया गया था। अपने दूसरे दो पुत्रों को उन्होंने स्वयं सजाकर युद्ध में भेजा था। गुरु गोविन्द सिंह जी संत योद्धा और कवि थे।

दुश्मनों के छक्के छूट गये थे। वे रणभूमि छोड़कर भाग खड़े हुए थे। गुरु गोविन्द सिंह का पराक्रम देखें—

शाही की गुमान झारयो, ठसकि दिमान फार्यो,
मसकि मरोर डार्यो शान दुराचारी की,
कायर कपूत भागे, हिम्मत हरान लागे,
प्रान लै परान लागे, पेखि अधिकारी की।
गोविन्द गुरु दै हल्ला, पैठे युद्ध माँहि गल्ला,
काटत नवीन कल्ला अट्ट निज रारी की,
सैनिक मुगल्ला कहें, बख्श दीजै प्राण अल्ला,
बाज आये जंग ते दोहाई बाजधारी की।

गुरु गोविन्द सिंह और उनके बहादुर साथियों, धर्म योद्धाओं की मार से भाड़े के टट्टुओं के पाँव उखड़ गये। रणभूमि में घायलों की कराह गूंज रही थी। गुरु का यह आग्रह था कि घायल अथवा मृतक श्वान, श्रृगाल, लोमड़ी, गिद्ध, चील, कौओं के ग्रास न बने। घायल की समुचित सेवा सुश्रुषा हो और मृतकों का सम्मान से संस्कार हो। चारों ओर घायलों और मृतकों के ढेर लगे थे। बड़ा दारुण दृश्य था, अकल्पनीय। घायलों की सेवा सुश्रुषा के लिए गुरु जी का प्रिय शिष्य कन्हैया युद्धभूमि में इधर से उधर दौड़ रहा था। तब तक एक ओर से आवाज़ आयी, ''भाई पानी पिला दें, प्यास के मारे तालू में काँटे पड़ गये हैं।'' कन्हैया उस ओर बढ़ा ही था कि दूसरी आवाज़ आयी, ''उसे पानी हरगिज मत पिलाना, वह दुश्मन है। खबरदार वह, विधर्मी मुसलमान है।''

कन्हैया ने दूसरी आवाज़ को अनसुनी कर दिया और पहले प्यासे को पानी पिलाया। उसके बाद वह दूसरी आवाज़ तक पहुँचा, ''गुरु के बन्दे, तू गुरु की नसीहत भूल गया, हम धर्मयोद्धा हैं। धार्मिक निर्दयी और बर्बर नहीं हो सकता, हमारी लड़ाई अन्यायी और आततायी के ख़िलाफ़ है। हमारी लड़ाई इस्लाम और मुसलमान के ख़िलाफ़ नहीं है। घायल केवल घायल है, वह हिन्दू अथवा मुसलमान नहीं होता। वह स्वधर्मी या विधर्मी नहीं होता, वह मित्र या दुश्मन नहीं होता, वह जो घायल है, हमसे सेवा पाने का हक़दार है। वह महज घायल है।'' कन्हैया ने उसे गुरु की भूली हुई नसीहत याद दिलायी।

‘‘भाई कन्हैया, तू देख रहा है, मैं बुरी तरह ज़ख्मी हूँ। मेरा काफी कुछ लहू निकल चुका है। मैं एकदम लबेदम हूँ, पल दो पल का मेहमान। मुझ पर एक एहसान करना भाई, मरते हुए आदमी पर एक उपकार। जिन्दगी की इस आख़िरी मंज़िल पर पहुँचकर मैं गुरु का बंदा गुरु की ही नसीहत भूल गया। कैसा बदकिस्मत हूँ मैं। मुझ पर तरस खाओ मेरे भाई। मेरी तरफ से मेरा गुनाह गुरु के सामने कबूल कर मुझे मेरे गुनाह के लिए गुरु से माफी दिलवा देना, नहीं तो मेरी गुनहगार बेचैन रूह तमाम अरसे तक आसमान में भटकती रहेगी। वायदा कर मुझ पर यह एहसान करेगा न?’’ दूसरी आवाज़ गिड़गिड़ायी। कन्हैया ने उसे आश्वासन दिया। ‘‘जो बोले सो निहाल, सत् श्री अकाल’’ के जयघोष के साथ वह दूसरी आवाज़ हमेशा के लिए ख़ामोश हो गयी।

टीपू सुल्तान की मुँहबोली बहन

अंगरेजों की नजर मद्रास प्रेसीडेन्सी के शिवगंगा स्टेट पर थी। देशद्रोही डकैत कट्टू अंगरेजों से सौदेबाज़ी कर रहा था। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के साथ सारी चालबाज़ी, सारा युद्ध करने के बाद आख़िरकार झाँसी राज्य को अंगरेजों ने अपने राज्य में मिला लिया। इसी तरह कर्नाटक में कित्तूर राज्य में मल्लप्पा शेट्टी जैसे देशद्रोही को फोड़कर रानी चेन्नमा से युद्ध आदि करके अन्ततः कित्तूर राज्य को अंगरेजों ने अपने अधीन कर लिया। अब उनकी नजर मद्रास के शिवगंगा राज्य की वीरांगना रानी वेलु नाचियार पर थी।

कट्टू को तो वेलु ने स्वयं मौत के घाट उतार दिया। उसने वेलु के अपहरण की चेष्टा की, उस समय वेलु ने उसके कलेजे में तलवार उतार दी। बेंजोर और जैक्सन जैसे सेनापतियों को वेलु के हाथों मुँह की खानी पड़ी। इसके उपरान्त दुगनी शक्ति लेकर अंगरेजों ने फिर शिवगंगा पर आक्रमण किया। शिवगंगा के महाराज ने वीरगति पायी। अंगरेजों ने किले का चप्पा-चप्पा छान मारा मगर वेलु हाथ न आयी।

वेलु नाचियार दिन-रात घोड़ा दौड़ाती हुई डिंडीगल जा पहुँची। वह वीर हैदरअली के सुपुत्र टीपू सुल्तान के दरबार में जा पहुँची। टीपू ने स्वयं आगे बढ़कर बहन वेलु नाचियार का ख़ैर मकदम किया। "आप हुकुम करें, टीपू आपकी क्या ख़िदमत करे?" टीपू ने कहा। "भैया, यह राखी मैं तुम्हारी कलाई पर बाँध रही हूँ। यह राखी नहीं आग का निमंत्रण है।" वेलु ने टीपू की कलाई पर राखी बाँधते हुए शिवगंगा राज्य की दुर्दशा और महाराज के वीरगति पाने का वर्णन किया। उसकी आँखें, कण्ठ और हृदय भरे-भरे थे।

''जहे किस्मत, बहन तेरे भाई को तेरा आग का यह दावतनामा मंजूर है। टीपू की फ़ौज इसी दम शिवगंगा के लिए कूच करेगी। जब तक बहन को उसका हक न दिला दें, टीपू के लिए एक-एक पल का भी चैन हराम होगा।'' टीपू ने घोषणा की। टीपू के सिपहसालारों ने उसे लाख मना किया कि एक हिन्दू औरत के लिए अंगरेजों से दुश्मनी मोल लेना मुनासिब नहीं होगा। टीपू ने कहा, ''वेलु नाचियार, हिन्दू अथवा मुसलमान से ऊपर टीपू सुलतान की प्यारी बहन है। उसकी शान के ख़िलाफ़ टीपू कुछ नहीं सुन सकता। जो भी उसके ख़िलाफ़ एक

शब्द भी बोलेगा, उसकी जबान खींच ली जायेगी। एक हिन्दू बहन की राखी के धागे टीपू को अपनी जान से भी ज्यादा अजीज़ हैं।'' दिन-रात चलता हुआ टीपू आँधी-पानी की तरह अंगरेजों पर टूट पड़ा। अंगरेजों को इसका कतई अनुमान न था। उनमें भगदड़ मच गयी, उनके पाँव उखड़ गये।

''बहन की ताजपोशी देखकर टीपू डिंडीगल लौटेगा।'' टीपू ने घोषणा की। टीपू ताजपोशी की तैयारी में लग गया। मगर नियति को कुछ और मंजूर था। टीपू ने भी लगता है बहुत कुछ बादशाह हुमायूँ की किस्मत पायी थी। उसके भाग्य में बहन की ताजपोशी देखना न था। एक सैनिक भागा-भागा घबराया हुआ आया। ''क्या बात है? तुम इतने घबराये क्यों हो? साफ-साफ कहो।'' टीपू ने आने वाले सैनिक से पूछा।

''हुज़ूर मैं कुछ न कह पाऊँगा, मेरी जबान जल उठेगी, आप खुद चलकर देख लें।'' बड़ी मुश्किल से वह कह पाया। उसके पीछे-पीछे जाकर टीपू ने देखा कि महाराज की समाधि पर प्रणति के लिए, वेलु जो एक बार झुकी तो फिर नहीं उठी। वहीं महाराज की समाधि पर ही वह चिरनिद्रा में लीन हो गयी। ''बहन, महाराज से मिलने की तुम्हें इतनी जल्दी थी, मेरी एक मुराद थी अपनी बहन को तख्त पर बैठा देखने की, इतना इन्तज़ार भी तुम नहीं कर सकी।' और वह फफक कर रो पड़ा।

तुलसी और रहीम

सुप्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानखाना, सम्राट अकबर का निमन्त्रण लेकर गोस्वामी तुलसीदास के पास गये। गोस्वामी जी ने अति विनम्र किन्तु दृढ़ अस्वीकार दिया—

हौं तो चाकर राम को पटो लिखो दरबार,
तुलसी अब का होयेंगे नर के मनसबदार।

मुगल सल्तनत उस समय एशिया की सबसे बड़ी सल्तनत थी उसके शहंशाह का निमंत्रण अस्वीकार करना, जिसकी इच्छा मात्र ही कानून होती थी, एक जोखिम भरा काम था। रहीम ने गोस्वामी जी का अभिनन्दन किया और कहा, ''मुझे इस बात का गर्व है कि हम कवियों की बिरादरी में कोई ऐसा भी है, जो बड़े-से-बड़े प्रलोभन को भी निडर होकर विनम्र ढंग से ठुकरा सकता है।'' आम तौर पर कोई और आदमी होता तो वह बुरा मान जाता, लेकिन इस घटना से रहीम के मन में तुलसी के प्रति आदर और भी बढ़ गया।

एक दिन की बात है तुलसी और रहीम बैठे थे। कहा जाता है उधर एक हाथी आ निकला, वह अपनी सूँड़ से धूल उठाकर अपने मस्तक पर डाल रहा था। गोस्वामी जी ने हँसकर पूछा, ''धूर उड़ावत सिर धरत कहु रहीम केहि काज?'' रहीम ने हँसकर उत्तर दिया, ''जेहि रज मुनिपत्नी तरी सो ढूँढत गजराज।'' कहा जाता है अपने अन्तिम दिनों में उन पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा था। उनके दामाद को शराब पिला-पिलाकर हत्या कर दी गयी थी और उनके पुत्र का सर कटवा कर जहाँगीर ने उस सर को भेंट के रूप में खानखाना को भिजवा दिया था वे भागे-भागे फिर रहे थे, उन दिनों वे चित्रकूट में ही तुलसी के सान्निध्य में ही रहे।

चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध नरेश,
जिन पर विपदा पड़त है सो आवत यहि देश।

एक बार एक विधवा ब्राह्मणी गोस्वामी जी के पास पहुँची। उसने कहा, ''गोसाई जी आप सिद्ध महात्मा हैं। मेरी बेटी सयानी हो चली है, उसके हाथ पीले करने हैं और पास में एक दमड़ी नहीं है। आप ही मुझे इस संकट से उबरने में सहायक हो सकते हैं।'' तुलसी बेचारे निहंग बैरागी, उनके पास क्या धरा था ? परन्तु जिस विश्वास से वह याचिका आयी थी, उस विश्वास की भी रक्षा होनी थी। गोस्वामी जी ने उसे एक पुर्जी दी और कहा, ''आप इस पुर्जी को लेकर खानखाना के पास चली जायें, राम जी ने चाहा तो आपका काम हो जायेगा।'' उन दिनों खानखाना साहब जौनपुर में थे।

वह ब्राह्मणी खानखाना के यहाँ पहुँची। खानखाना को गुसलखाने में खबर मिली कि गोस्वामी जी की भेजी कोई महिला उनसे मिलने आयी है। वे भीगे बदन

ही भागे आये। उसे सादर भीतर ले गये। एक अन्य ब्राह्मणी से उसके भोजन आदि की व्यवस्था करायी और नहा-धोकर जब ब्राह्मणी से मिले तो उसने अपनी कथा बतलाते हुए वह पुर्जी खानखाना को दे दी, जिसमें एक पंक्ति लिखी थी, ''सुरतिय नरतिय नागतिय अस चाहत सब कोय।'' अर्थात् देवता की स्त्री हो, नर की स्त्री हो अथवा नाग की स्त्री हो, सबकी यह इच्छा होती है कि उसकी बेटी भले घर जाय। सुखी रहे।

खानखाना ने ब्राह्मणी को उसकी आवश्यकता से कहीं ज्यादा धन दिया और आग्रह किया कि वह जाते समय उस पुर्जी को गोस्वामी जी को देती जाय। रहीम खानखाना ने उस पुर्जी में दूसरी पंक्ति जोड़ दी, जिससे उसका अर्थ ही बदल गया। दोनों पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

सुरतिय नरतिय नागतिय अस चाहत सब कोय,
गोद लिये हुलसी फिरें तुलसी सो सुत होय।

हुलसी तुलसी की माँ का नाम था। अर्थात् देवताओं की स्त्री, नर की स्त्री और नाग की स्त्री सभी यह चाहती हैं कि वे माता हुलसी की तरह गोद में तुलसी जैसा बेटा लेकर हुलसी-हुलसी अर्थात् मगन-मन फिरें।

तुलसी और रहीम खानखाना के सम्बन्ध को बतलाती हुई एक और घटना है, जो इस प्रकार है। अकबर की सेना में एक सिपाही, जिसका गौना होना था, छुट्टी लेकर गया था। वह लिये गये अवकाश से अधिक ठहर गया। यह सैनिक अनुशासन के विपरीत था। चलते समय वह दण्ड की कल्पना से भयभीत और चिन्तित था। उसकी बहू ने एक पुर्जे में दो पंक्तियाँ लिखीं और कहा, ''इसे आप खानखाना साहब को देने के बाद अपने काम पर जाइयेगा।'' उसने खानखाना की सेवा में पहुँचकर, अपनी बात बतलायी और अपनी बहू का पुर्जा उन्हें दे दिया। पुर्जे में लिखा था—

नेह प्रेम का बीरवा रोप्यों जतन लगाय,
सींचन की सुधि लीजियो, देख्यो मुरझि न जाय।

खानखाना ने पंक्तियाँ पढ़ीं और उनकी आँखें ममता से छलक आयीं। उन्होंने सम्राट अकबर से न केवल उसे माफी दिलवायी बल्कि छः माह की और छुट्टी दिलवा दी। जाते समय उन्होंने उसकी बहू को ढेर सारी भेंट भिजवायी और कहा, ''यह सारी भेंट मेरी बेटी को देना, मेरी दुआएँ देना। हाँ तुम मेरा एक काम करना। इस पुर्जे को जाते समय गोस्वामी जी को देकर यह कहना कि खानखाना की प्रार्थना है, वे इसी छंद में फिर रामकथा लिखें।'' कहा जाता है। इसी छंद से प्रेरित होकर खानखाना के अनुरोध की रक्षा करते हुए, गोस्वामी जी ने बरवै रामायण की रचना की।

भालों की सेज

कर्नाटक में एक राज्य था, जिसका नाम था कित्तूर। कित्तूर की रानी का नाम था चेन्नमा। चेन्नमा को प्रजा आदरपूर्वक रानी माँ कहती थी। जिस प्रकार उत्तर भारत में अंगरेजों से संघर्ष करने, जमकर लोहा लेने वाली वीरांगनाएँ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, अवध की बेगम हज़रत महल, देवी चौधरानी, ऊदा देवी हुईं हैं। उसी प्रकार दक्षिण भारत में भीमाबाई होलकर, वेलुनाचियार और कित्तूर की रानी माँ चेन्नमा का नाम लिया जाता है।

कित्तूर राज्य में एक मस्जिद के जीर्णोद्धार के लिए रानी माँ ने अनुदान दिया था। इस मस्जिद के खुलने के अवसर पर एक जलसा किया गया। उस जलसे में रानी माँ भी उपस्थित थीं। जलसे में सैदन साहब के पौत्र बाला ने तलवार के अनूठे करतब दिखलाये। रानी माँ ने प्रसन्न होकर उसे एक तलवार भेंट की। रानी माँ, आप इजाज़त दें तो मैं आपसे कुछ अर्ज़ करूं।'' बाला ने हाथ जोड़ कर कहा।

''हाँ, हाँ कहो बेटे, तुम्हें जो भी कहना हो निडर होकर कहो।'' रानी माँ चेन्नमा ने कहा। ''रानी माँ, मेरे बाबा सैदन साहब मेरा लालन-पालन कर रहे हैं, उनके पालन-पोषण में कोई कोताही नहीं है, फिर भी मेरी ख्वाहिश है कि आप मुझे अपनी ख़िदमत में कबूल कर लें। मेरे माँ-बाप नहीं रहे। आपकी ख़िदमत में रहकर मैं महसूस करूंगा कि मैं अपनी माँ के पास हूँ।'' पन्द्रह वर्षीय बाला का निवेदन सुनकर रानी माँ का मन भर आया। ''बेटे, अभी तुम बहुत छोटे हो। तुम्हें अपने पास रख लूँगी तो बाबा सैदन साहब अकेले पड़ जाँयेंगे।'' रानी माँ ने समझाया।

''रानी माँ, बच्चे की ज़िद रख लें, इसका अब्बा भी आपकी ही ख़िदमत में कुरबान हुआ है। यह भी आपकी ही ख़िदमत में ज़िंदगी बसर करे, इससे

अच्छी बात और क्या हो सकती है? रानी माँ इस बच्चे की गुजारिश में मैं बूढ़ा सैदन भी अपनी कमज़ोर आवाज़ मिला रहा हूँ।'' बूढे सैदन साहब ने आग्रह किया। रानी माँ ने बाला को अपना अंगरक्षक नियुक्त कर लिया। बाला के चेहरे पर खुशियाँ थिरक उठीं।

रानी माँ चेन्नमा के पास बराबर छाया की तरह बाला बना रहता। कभी वह सुभद्रा का लाल अभिमन्यु मालूम होता तो कभी देव सेनापति बालक कार्तिकेय। उसकी खुशी का ठिकाना न था। अंगेरजों की गिद्धदृष्टि कित्तूर पर थी। उन्हें मल्लप्पा शेट्टी जैसे गद्दारों का भरोसा था। मल्लप्पा शेट्टी राज्य का दीवान था। उसने रानी माँ की महराजिन महान्तधा को मिलाया और खीर में विष देने की योजना बनायी। ऐन वक़्त पर मल्लप्पा शेट्टी के यहाँ रहने वाली देशभक्त नर्तकी कलावती ने भण्डाफोड़ कर दिया। महान्तधा को अपनी बनायी खीर स्वयं खाकर जान देनी पड़ी।

मल्लप्पा शेट्टी ने उस नर्तकी की कटार भोंक-भोंक कर हत्या कर दी। मल्लप्पा शेट्टी भी पकड़ा गया और हाथी के पाँव तले रौंदवा दिया गया। इस समाचार से अंगरेज सेनापति थैकरे आग बबूला हो गया। उसने कित्तूर पर आक्रमण कर दिया। रणक्षेत्र में रणचण्डी की तरह सफेद घोड़े पर सवार कित्तूर की रानी माँ चेन्नमा उपस्थित थीं। कवच शिरस्त्राण तलवार से सज्जिता रानी माँ की छवि देखते बनती थी। उनके बगल में सजा हुआ बाला खड़ा था।

रणभेरी बज उठी, रानी माँ जिधर निकल जातीं, लाशों के ढेर लग जाते। वह गाजर-मूली की तरह दुश्मनों को काटती जा रही थीं। उसके साथ-साथ बाला की तलवार कहर बरपा कर रही थी। यह क्या अकस्मात् बाला ने देखा कि थैकरे रायफल का निशाना रानी माँ पर साध रहा है। वह चीते की फुर्ती से उछला, रानी माँ पर दागी गयी गोली अपने सीने पर ली और तलवार के एक ही वार से थैकरे का सर भुट्टे की तरह उड़ा दिया। सेनापति थैकरे का गिरना था कि अंगरेज सेना में भगदड़ मच गयी, उसके पाँव उखड़ गये। कित्तूर की जय, रानी माँ की जय, भारत देश की जय के गगनभेदी नारों से वातावरण गूंजने लगा।

रात घिर आयी थी। अपने विश्वस्त कर्मचारियों के साथ रानी माँ रणभूमि में अपना कर्तव्य पालन कर रही थीं। मृतकों का संस्कार और घायलों की सेवा-सुश्रूषा की व्यवस्था होनी थी। यह क्या बाला अन्तिम साँसें ले रहा था। रक्त बहुत निकल चुका था। रानी माँ चेन्नमा रो पड़ीं, ''बेटे यह क्या हो रहा है?''

''रानी माँ, रोयें नहीं, मेरी मौत बायसे फक्र होगी, मुझे यह तसल्ली है कि मैंने अपनी नाचीज ज़िंदगी मादरेवतन और रानी माँ के कदमों पर निसार की है।'' बाला बमुश्किल तमाम बोल पाया।

''बेटे, अब क्या हो सकता है?'' लाचार हो रही रानी माँ ने कहा। ''रानी माँ, मेरी एक आख़िरी ख्वाहिश है, बोलो पूरा करोगी न?'' बाला बेचैन हो रहा था। ''हाँ हाँ, बोल बेटे।'' रानी माँ फट कर रो पड़ीं। ''रानी माँ, मेरे पास समय बहुत कम है। माँ मेरी मैयत न तो बंद ताबूत में निकाली जाय और न ही खाट पर निकाली जाय। उसे भालों की नोक पर निकाला जाय।'' और बाला का निर्जीव शरीर एक ओर लुढ़क गया।

बाला का जनाज़ा निकाला गया। उसकी अन्तिम इच्छा के अनुसार वह भालों की नोक पर लिटाया गया था। ''मैंने महाभारत में पढ़ा था कि पितामह भीष्म बाणों की सेज पर लेटे थे, देखा नही था, आज प्रत्यक्ष देख रही हूँ।'' और रानी माँ चेन्नमा फूट-फूट कर रो पड़ी।

सन्त एकनाथ और पठान

महाराष्ट्र के महान सन्तों में सन्त एकनाथ का नाम विशिष्ट है। उन्होंने भगवान दत्तात्रेय की उपासना की थी। उन्होंने पहले निराकार ब्रह्म की उपासना की, फिर सगुणोपासना के अन्तर्गत भगवान कृष्ण का साक्षात्कार किया और बाद में भगवान राम का चरित, भावार्थ रामायण की रचना की। सन्त एकनाथ ने अक्रोध व्रत धारण कर रखा था। वे किसी भी स्थिति में क्रोध नहीं करते थे। दुष्टों की तो कमी नहीं होती, वे उन्हें क्रोध दिलाने के लिए प्रयत्न करते रहे।

एक दिन की बात है, वे भोजन कर रहे थे कि लोगों के उकसाने में गोपाल नाम का उनका पड़ोसी, बिना हाथ-पाँव धोये उन्हीं के साथ उन्हीं के थाली में भोजन करने के लिए बैठ गया। उसे उम्मीद थी कि एकनाथ उसके इस आचरण से कुपित हो जायेंगे, लेकिन वे तो बराबर मुसकराते रहे। उनकी पत्नी उन्हें भोजन परोसने आयीं तो वह दुष्ट उछलकर उनकी पीठ पर चढ़ गया। ''देखना, गोपाल पीठ से गिरने न पाये।'' सन्त एकनाथ ने पत्नी से कहा। ''आप चिन्ता न करें मुझे पुत्र हरि को पीठ पर लादकर काम करने की आदत है, गोपाल गिरने नहीं पायेगा।'' सन्त पत्नी ने उत्तर दिया। आखिर वे भी सन्त की ही सहधर्मिणी थीं।

गोपाल आत्मग्लानि से तपने लगा। वह सन्त-पत्नी के चरणों से लिपट कर रोने लगा, ''माँ मुझे क्षमा करो, मैं लोगों के बहकावे में आ गया था।'' सन्त-पत्नी ने हँसकर उसे क्षमा कर दिया। अब वह सन्त एकनाथ से क्षमा माँगने लगा। सन्त एकनाथ ने हँसकर कहा, ''मैंने तो तुम्हारे अपराध को महसूस ही नहीं किया, फिर क्षमा कैसी ?''

दुष्टों का यह वार तो खाली गया। अब वे फिर नया चक्र चलाने की सोचने लगे। एक दिन की बात है, सन्त एकनाथ गोदावरी स्नान कर लौट रहे थे। रास्ते में एक पठान थानेदार रहता था। उसे बतलाया गया कि यह सन्त एकनाथ नाम का व्यक्ति बड़ा ढोंगी है। इसने अक्रोध व्रत का पाखण्ड रच रखा है। वह अपनी खिड़की पर खड़ा था। जब एकनाथ जी उसकी खिड़की के नीचे से गुजरे तो उसने उन पर भरपीक थूक दिया। सन्त के सर पर उसका थूक पड़ा, उन्होंने ऊपर देखा, पठान बेहयाई से मुसकरा रहा था। सन्त एकनाथ भी मुसकरा दिये और स्नान करने के लिये, फिर लौट गये। वे स्नान कर फिर लौटे पठान ने फिर वही

हरकत की, सन्त एकनाथ फिर स्नान करने के लिये लौट गए। वे बार-बार स्नान कर लौटते और पठान बार-बार वही हरकत करता।

लोगों ने आग्रह किया, ‘‘महाराज आप दूसरे रास्ते से निकल जायें। यह दुष्ट बार-बार वही हरकत करता है।’’ सन्त एकनाथ मुसकराये, ‘‘यह सज्जन है, यह अपना रास्ता नहीं बदलता, तो मैं अपना रास्ता कैसे बदल दूँ?’’ यह सिलसिला एक दो बार नहीं, पूरे एक सौ आठ बार चला। पठान सन्त पर थूक देता और सन्त मुसकराकर लौट जाते और फिर स्नान कर उसी रास्ते से लौटते। एक सौ नवीं बार जब सन्त एकनाथ लौट रहे थे, उनके चेहरे पर वह सरल-तरल भोली-सी मुसकान थी। पठान ने आगे बढकर उनके चरण पकड लिये और रोते हुए अपने किये की माफी माँगने लगा। सन्त एकनाथ ने कहा, ‘‘भाई तुम्हारा बड़ा उपकार है, यूँ मैं एक ही दिन में एक सौ आठ बार गोदावरी स्नान क्यों करता, तुम्हारी कृपा से ही मुझे एक सौ आठ बार गोदावरी स्नान का पुण्य प्राप्त हुआ।’’ पठान पानी-पानी हो गया। सन्त की क्षमा ने उस परमविरोधी को भी जीत लिया था।

चिम्मा जी अप्पा की ईसाई बहन

बसई का किला पुर्तगाली अत्याचार का केन्द्र बन गया था। बसई के किसान मजदूरों को वहाँ लाया जाता। जबरन उनसे हाड़-तोड़ मेहनत करायी जाती और आख़िरकार बलात् अथवा हठात् उनका धर्म-परिवर्तन भी कराया जाता। उनकी बहू-बेटियों की अस्मत से खिलवाड़ किया जाता। सारी-सारी रात सुरा और सुन्दरी का राग-रंग चलता रहता। चारों ओर एक लाचारी, एक बेचारगी, एक निरुपायता, एक असहायता, एक विवशता व्याप्त थी।

तंग आकर एक दिन कुछ दुखी जन फरियाद लेकर चिम्मा जी अप्पा के दरबार में हाज़िर हुए। चिम्मा जी ने उनकी दर्दभरी कहानी सुनी, उनका जी भर आया। उनकी आँखों में रक्त उतर आया। उन्होंने फरियादियों को आश्वासन दिया।

चिम्मा जी अप्पा ने कूच का डंका बजवा दिया। देखते-देखते मराठा सेना ने बसई का किला घेर लिया। घमासान युद्ध होने लगा। चारों ओर मार-काट, त्राहि-त्राहि मच गयी। एक ओर अन्याय का प्रतिकार करने के लिए प्रेरित योद्धा थे, तो दूसरी ओर भाड़े के टट्टू थे। उनके पाँव उखड़ गये। अन्याय की पराजय हुई। न्याय की जय पताका आसमान में फहराने लगी।

विजेता चिम्मा जी अप्पा ने किले में प्रवेश किया। किले में एक भी विदेशी नहीं बचा था। या तो वे मौत के घाट उतार दिये गये थे या फिर वे भाग खड़े हुए थे। वहीं अपवाद स्वरूप एक ईसाई सुन्दरी भय से थर-थर काँप रही थी। मराठा सैनिकों ने उसी पर प्रतिरोध का वज्र तोड़ना चाहा। तब तक वीर चिम्मा जी अप्पा ने कड़क कर आदेश दिया, ''खबरदार, कोई भी मेरी ईसाई बहन को कुछ न कहे। मैं उसकी शान के ख़िलाफ़ कुछ भी नहीं सुन पाऊँगा।

उसकी ओर उठी लुब्धक अपवित्र आँखें फोड़ दी जायेंगी।''

''बहन तुम कौन हो? डरो मत तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं होगा। तुम अपने भाई के सामने खड़ी हो। निडर होकर अपनी बात कहो।'' चिम्मा जी अप्पा ने आश्वासन भरे स्वर में कहा। ''मेरा नाम ईसा बेला है, मैं इस किले के किलेदार फर्नाण्डीज़ की पत्नी हूँ। वह मुझे मुसीबत में छोड़कर कायरों की तरह अपने प्राण बचाकर भाग गया है।'' ईसा बेला फफक कर रो पड़ी।

''रो मत बहन, तुम संकट में नहीं हो, भाई के रहते बहन के लिए संकट कैसा। हम चप्पा-चप्पा छानकर फर्नाण्डीज की खोज करेंगे मिलने पर तुम्हें ससम्मान उन्हें सौंप देंगे। जब तक वे नहीं मिलते, तुम अपने भाई चिम्मा जी अप्पा के साथ सुखपूर्वक रहोगी।'' चिम्मा जी के आश्वासन पर ईसा बेला की आँखों में आँसू और ओठों पर मुसकान आ गयी। उनमें चिम्मा जी अप्पा के प्रति साफ-साफ-कृतज्ञता और सराहना को पढ़ा जा सकता था।

शरणागत के लिए

अलाउद्दीन खिलजी के बागी सरदार दाऊद खाँ ने राणा हम्मीर के यहाँ शरण ली। बादशाह ने बागी को सबक सिखाने के लिए राणा से उसे वापस माँगा। राणा हम्मीर ने कहलाया, ''बादशाह सलामत, दाऊद खाँ, हमारी शरण में आये हुए हमारे सम्मानित अतिथि हैं। हम उन्हें आपको कैसे सौंप सकते हैं?'' अलाउद्दीन खिलजी आगबबूला हो गया उसने कहलाया, ''हमारा बागी, हमें सौंप दिया जाय, वरना ईंट से ईंट बजा दी जायेगी।''

राणा का स्वाभिमान धमकियों की भाषा सुनने का अभ्यस्त कभी नहीं रहा। उसने बादशाह खिलजी को मुंहतोड़ उत्तर भिजवा दिया, ''हम भी रणभूमि में बादशाह के तलवार का पानी देखना चाहते हैं।'' बस फिर क्या था, बादशाह अलाउद्दीन खिलजी की सेना राणा हम्मीर पर चढ़ दौड़ी। महानाश का भीषण ताण्डव नर्तन होने लगा। संख्या में राजपूत बहुत कम थे, फिर भी एक-एक राजपूत योद्धा दस-दस पर भारी पड़ रहा था।

दाऊद खाँ ने जब यह महानाश देखा तो वह राणा के सामने उपस्थित हुआ, ''महाराणा, मुझसे यह तबाही देखी नहीं जा रही है। मुझे इजाजत दें, मैं बादशाह के सामने आत्मसमर्पण कर दूँ। कम-से-कम इतनी बड़ी तबाही तो थमे।'' ''खाँ साहब, आप हमारी तौहीन कर रहे हैं। यह वीर का सम्मान नहीं अपमान है। शरणागत की रक्षा के लिए हनुमान जैसे भक्त ने भगवान राम को ललकार दिया था। शरणागत की रक्षा के लिए अर्जुन जैसे भक्त ने भगवान श्रीकृष्ण को ललकार दिया था। शरणागत कबूतर की रक्षा के लिए राजा शिवि ने बाज के सामने अपना मांस काट कर तौल दिया था। इतनी शानदार विरासत से

हम गद्दारी कैसे कर सकते हैं। हमारा निर्णय अटल होता है—

चंद्र टरै सूरज टरै, टरै जगत व्यौहार,
पै दृढ़ हरिश्चंद्र का टरै न सत्य विचार।

अथवा

रघुकुल रीति सदा चलि आयी
प्राण जाय, वरु वचन न जायी।

हमारे पास इतना गौरवमय उत्तराधिकार है, हम प्राण दे सकते हैं, वचन झुठला नहीं सकते।'' ''महाराणा मैं एक मुसलमान हूँ, मेरे लिये...'' ''आप मुझे बहकाने की कोशिश न करे खाँ साहब, आप हिन्दू मुसलमान कुछ हों इससे हमें कोई मतलब नहीं, हम केवल इतना जानते हैं कि आप हमारे सम्मानित शरणागत बंधु हैं।'' हम्मीर अपनी बात पर अटल बने रहे।

बादशाह अलाउद्दीन का क्रोध अपनी चरम सीमा पर था। राणा हम्मीर भी अपनी आन-बान-शान पर दृढ़ रहे। उनके पथ का एक-एक व्यक्ति नर-नारी-बच्चे तक बलि हो गये परन्तु उन्होंने शरणागत को शत्रु को सौंपा नहीं। एक नयी कहावत, एक नयी लीक बनी—तिरिया तेल हमीर हठ चढ़े न दूजी बार।

निज़ाम और ईद

बाजीराव प्रथम अथवा बाजीराव बल्लाल पेशवा और निज़ाम-उल-मुल्क के बीच। सन् 1728 में गोदावरी तट पर भयंकर युद्ध हुआ। मराठे जीत गये और मुस्लिम सेना में अन्न का भारी तोड़ा आ गया। इसी बीच ईद मुबारक का त्यौहार आ गया। निज़ाम के सामने कठिन समस्या थी। उसने बाजीराव पेशवा से सहायता की अपील की।

बाजीराव बल्लाल पेशवा ने अपने सैनिक अधिकारियों की आपात बैठक बुलायी। उनके सामने निज़ाम की अपील रखी गयी। सभी की एकमत राय थी। दुश्मन के साथ किसी प्रकार की नरमी न बरती जाय। बाजीराव प्रथम ने कहा, ''मेरा अनुरोध है कि इस अपील पर सहृदयतापूर्वक विचार किया जाय।'' अधिकारियों ने कहा, ''नीति यह कहती है कि शत्रु के प्रति कोई रियायत नहीं बरती जानी चाहिए। इस समय दुश्मन की लाचारी का लाभ उठाकर हम उससे मनमानी शर्त मनवा सकते हैं।''

''मैंने आप लोगों की बातें सुन लीं, मैं आपकी राय का आदर करता हूँ। नीति के अनुसार शायद आप सही हों। परन्तु क्रूरता वीरता की शोभा नहीं है। हमने रणभूमि में अपनी तलवार का पानी निज़ाम को दिखला दिया है। बीमार, भूखे, सोये हुए घायल शत्रु पर कहर ढाना शौर्य की शोभा नहीं है। निज़ाम को आवश्यकता से अधिक सहायता देकर उनकी अपील का सम्मान किया जाय। उदारता वीरता का आभूषण है।'' बाजीराव पेशवा ने कहा।

पाँच हजार बैलों पर आवश्यक सामग्री लदवाकर बाजीराव प्रथम ने उसे निज़ाम के सैनिकों के लिए भिजवा दिया। कृतज्ञता एवं आभार से निज़ाम और

उनके सैनिकों की आँखें डबडबा आयीं। कृतज्ञ निज़ाम ने कहलाया, ''मैदान-ए-जंग में आप जीते, हम हारे, यह हार-जीत तो मुस्तकिल नहीं होती, लेकिन आपने अपनी उदारता, दया, धर्म, इन्सानियत से हमें हमेशा के लिए शिकस्त दे दी है। हम आपके एहसानमन्द हैं। हम आपके शुक्रगुज़ार हैं। हम आपसे कभी उऋण नहीं हो सकते। हमारा सलाम कबूल करें।''

अशफ़ाक़ के राम

काकोरी काण्ड के नायकों में एक थे पंडित रामप्रसाद बिस्मिल। वे घोषित करते हैं—

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है ज़ोर कितना बाजुए क़ातिल में है।

उनके साथी अशफ़ाक़ उल्ला खाँ। वे घोषित करते हैं—

कोई आरज़ू नहीं है, बस आरज़ू है इतनी
रख दे कोई ज़रा सी ख़ाके-वतन कफ़न में।

पंडित रामप्रसाद बिस्मिल कट्टर आर्यसमाजी थे। आर्यसमाजी, जो शुद्धि में विश्वास करता है और अशफ़ाक़ उल्ला खाँ साहब पाँच वक्त की नमाज़ के पाबन्द सच्चे मुसलमान थे। दोनों में दाँत काटी रोटी थी।

एक बार अशफ़ाक़ साहब को तेज बुखार आया, बुखार बढ़ता गया और अशफ़ाक़ साहब को सन्निपात हो गया। वे राम-राम रटने लगे। लोग बाग परेशान थे कि अशफ़ाक़ तो काफ़िर हो गया। पंडित रामप्रसाद बिस्मिल को खबर मिली। मित्र की यह हालत देखकर वे रो पड़े। उन्होंने अशफ़ाक़ साहब का सर अपनी गोद में ले लिया। अशफ़ाक़ के मस्तक पर रामप्रसाद बिस्मिल के आँसू टप-टप टपकने लगे। जहाँ डॉक्टर की दवा काम नहीं कर रही थी, वहाँ प्यार के आँसू सफल हो गये और अशफ़ाक़ ने आँखें खोल दीं, ''राम तुम आ गये। अब मैं अच्छा हो जाऊँगा। मुझे तुम्हारा ही इन्तजार था।''

शाहजहाँपुर में आर्यसमाज मन्दिर की ओर दंगाइयों की भीड़ बढ़ती चली आ रही थी। वे मंदिर को फूँक देना चाहते थे। उनके साथ आग लगाने का पूरा

सामान था। अकेले एकदम अकेले अशफ़ाक़ मन्दिर के दरवाजे पर चट्टान की तरह अड़ गये। उन्होंने दहाड़ कर कहा, ''मेरे हाथ में यह एक अदद पिस्तौल है। इनमें छः गोलियाँ हैं। तुम सब जानते हो, मेरा निशाना अचूक होता है। नापाक इरादों से अगर इधर कदम बढ़ाये गये तो मैं कम–से–कम छः आदमियों को तो ढेर कर ही दूंगा। रह गयी मेरी सो अल्लाह मालिक है। मुझे हर इबादतगाह चाहे वह जिस मजहब की हो, जान से भी ज्यादा अजीज़ है।'' और कहना न होगा कि दंगाइयों की भीड़ काई की तरह फट गयी।

उधर रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर में फँसी की सज़ा मिली। इधर अशफ़ाक़ को फैज़ाबाद में फाँसी की सज़ा मिली। अशफ़ाक़ को जेल से छुड़ा लेने की पूरी योजना बन चुकी थी। यह सूचना जब अशफ़ाक़ साहब को मिली तो उन्होंने कहा, ''फाँसी की सज़ा राम को भी सुनायी गयी है। राम के बिना अशफ़ाक़ नहीं रह सकता, उसके बिना मेरे लिये ज़िंदगी और दुनिया बेमानी है और मैं यह भी जानता हूँ कि अशफ़ाक़ के बिना राम भी नहीं रह सकता। और जब मुल्क पर कुरबान होने वालों में बिस्मिल जैसी हिंदू हस्तियों का नाम लिया जायेगा तो उस फेहरिस्त में एक मुसलमान नाम भी क्यों न शामिल हो?'' और अशफ़ाक़ ने जेल से भागने से इनकार कर दिया। उन्होंने फाँसी के फंदे से जो रास्ता अल्लाह या राम तक जाता है, उसे कबूल कर लिया।

isd **इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**
फ्लैट नम्बर–110, नम्बरदार हाउस, 62–ए, लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली–110067
टेलीफोन : 091–26177904, टेलीफैक्स : 091–26177904
ई–मेल : notowar.isd@gmail.com /वेबसाइट : www.isd.net.in
केवल सीमित वितरण के लिए
मुद्रण : डिजाइन एण्ड डाइमेन्शंस, एल–5 ए, शेख सराय, फेज–II, नई दिल्ली–110017